सघन अनुभूति का सरल रचनाकार : भवानी प्रसाद मिश्र

डॉ. प्रियंका मिश्रा
दिल्ली विश्वविद्यालय

सादगी से सराबोर, दृष्टि से सत्यवादी, विचारों से गाँधीवादी और दर्शन से अद्वैतवादी – ऐसे थे कविवर भवानी प्रसाद मिश्र। सीधे–सादे और बेहद भावुक इन्सान थे। प्रभाकर माचवे की ये काव्य–पंक्तियाँ भवानी भाई के व्यक्तित्व को साक्षात हमारे सामने उभार देती हैं –

'तुमने यह सादगी, यह साफ गोई,
स्पष्टता सीखी कहाँ से
जगत में तो कपट था या दुष्टता
यह बहुत ही पारदर्शी शब्द शैली, सरलता
यह दिखावे से, बनावट से घृणा, यह तरलता
तुम कहाँ सीखे–पिता से, गाँव से, संस्कार से?
तुम कहाँ सीखे बहन से, या किसी के प्यार से
क्या यहाँ सीखे निरन्तन गुनगुनाती धार से
या कि धीरल विन्ध्य की चट्टान से व पठार से?'

भवानी प्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व जितना संस्पर्शी है, उतना ही उनका काव्य भी। अपने भोगे हुए सच और उस से प्राप्त अनुभूति को जिस तरह वे पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते थे उससे उनकी अद्‌भुत काव्य–प्रतिभा का पता चलता है। कविता जैसे उनके कण्ठ से स्वतः ही फूट पड़ती है। उनकी कविता का सिद्धान्त वाक्य है –

'जिस तरह हम बोलते हैं उस तरह तू लिख
और उसके बाद भी हमसे बड़ा तूं दिख।'

मिश्र जी 'दूसरा सप्तक' की प्रथम पंक्ति के कवि थे। वे नयी कविता के कवि तो थे ही पर नयी कविता के ढाँचे में उनकी कवितायें किसी परम्परागत अवधारणा पर आरोपित नहीं हैं। वे हिन्दी की नयी कविता की राहों के अन्वेषी तो थे लेकिन उनकी राहें किसी बनी बनायी सड़कों से गुजरकर नहीं मिलती। वे कविता के बने बनाए प्रफेम में फिट होने के बजाए अपने लिए नए खाँचों का निर्माण करते थे और कुछ समय बाद उन्हीं खाँचों को तोड़कर फिर से नए खाँचों की तैयारी में जुट जाते। डॉ. शिवशंकर उनकी कविताओं की भाव–भूमि के सम्बन्ध में अपने विचार रखते हुए लिखते हैं, *'नयी कविता में भवानी भाई की जय–जयकार चाहे जितनी हो, किन्तु नए सिद्धान्तों के प्रफेम में उन्होंने अपनी कविता फिट करना कभी उपयुक्त नहीं समझा .... उन्हें हिन्दी के किसी युग में भी शामिल नहीं किया जा सकता। असल में, वे तो अपनी राह अलग बनाकर चले हैं। वे जनकवि हैं, उनकी कविता आम आदमी की कविता है।'*

भवानी प्रसाद मिश्र की कविता का 'आम आदमी' चारों ओर से संकटों से घिरा हुआ सामान्य इन्सान है। श्रम और परिश्रम उस आम आदमी के हथियार हैं और अपने इसी हथियार से भवानी भाई की कविता का आम आदमी अपने सम्पूर्ण चरित्र का निर्माण करता है। भवानी भाई का मानना था कि दुःखों, कष्टों और संघर्षों के बीच ही मानव–चरित्र का निर्माण होता है। इन्हीं संघर्षों के बीच से निकलर ही मानव की आंतरिक प्रकृति का परिष्कार और परिमार्जन सम्भव होता है। मिश्र जी मनुष्य के बाह्य आवरण को नहीं बल्कि आंतरिक वृत्तियों को निखारना चाहते थे। मनुष्य होने का अर्थ समझाते हुए कवि की दृष्टि को केन्द्र बिन्दु मनुष्य का ही यही संघर्षरत रूप और आंतरिक सौन्दर्य है –

'सीधी बात समय पर सूझे
कठिनाई से बढ़कर जूझे
दिशा समझकर चले बराबर
उसे आदमी कहो सरासर।'

औद्योगिक सभ्यता के दौर में मनुष्य मनुष्य के एक दर्जे नीचे की ज़िन्दगी जीने को मजबूर है। इस सभ्यता में मनुष्य मनुष्य न रहकर मशीन हो गया है। वह दिनभर लहु की भांति नाचता रहता है। दिनभर काम और केवल काम। मनुष्य और मनुष्य के बीच आपसी प्रेम और भाईचारा समाप्त है। स्नेह नदारद है। एक–दूसरे के लिए वक्त निकालना तो जैसे सपना हो गया है। औद्योगिक सभ्यता के मनुष्य का एक ही उद्देश्य रह गया है – मुनाफा, लाभ और स्वार्थसिद्धि। और इन तीनों की प्राप्ति के लिए मनुष्य

एक दूसरे का गला रेतने को भी तैयार हो जाता है। ऐसे में प्रेम, आदर्श और मानवता जैसी बातें खोखली सी लगती हैं। भवानी प्रसाद मिश्र का मुख्य उद्देश्य इन्हीं खोखली लगने वाली बातों का महत्त्व लोगों को समझाना था। इसके लिए वे झूठे, दगाबाज़ और लालची किस्म के लोगों को अपना मुख्य औजार बनाकर उनसे उन्हीं की शैली में बात करते थे। कवि के स्वर में जो धार है ऐसे लोगों के लिए, उसे कुछ यों देखा जा सकता है –

'जी, पहले कुछ दिन शर्म लगी मुझको
पर बाद–बाद में अक्ल लगी मुझको
जी, लोगों ने बेच दिए ईमान
जी, आप न हो सुनकर ज्यादा हैरान –
मैं सोच समझकर आखिर
अपने गीत बेचता हूँ
जी हाँ हुजूर, मैं गीत बेचता हूँ।'

भवानी प्रसाद मिश्र इस खोखले समाज और समाज को चलाने वाले ठेकेदारों से प्रश्न करते हैं कि हमने प्रगति की है, प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर हैं किन्तु क्या वास्तव में यही विकास है....? मनुष्य के बीच आपसी रिश्तों का "ास, एक दूसरे के लिए हिंसा और घृणा, एक दूसरे पर अविश्वास और एक दूसरे से अजनबियत ....? क्या यही विकास की वास्तविक परिभाषा है? भवानी भाई प्रगति की ऐसी उपलब्धि को सिरे से नकार देते और प्रगति की इस उपलब्धि की गति और दिशा पर फनर्विचार करने के लिए लोगों को प्रेरित करते।

विज्ञान के आगमन ने तो मनुष्य को मनुष्य से कोसों दूर कर दिया है। भवानी प्रसाद मिश्र ने सांस्कृतिक विघटन की इन स्थितियों को ज्यादा तेजी से महसूस किया। कवि को लगता है कि आज देश में भारतीय संस्कृति को धूमिल करने की प्रवृत्ति लगातार बढ़ रही है। विदेशी संस्कृति का अंधानुकरण बढ़ रहा है। वैज्ञानिक दृष्टि ने भारतीय जनता में अध्यात्म पर आधारित दृष्टि के प्रति आस्था कम की है और भौतिकवादी तथा पाश्चात्य संस्कृति के प्रति आकर्षण बढ़ाया है। पर यह भी सच है कि भारतीय समाज खासतौर पर शहरी समाज के बदलते परिवेश में अपने आपको भौतिकवादी बनाने का प्रयत्न तो किया पर उन्हें पूरी कामयाबी हासिल नहीं हो पई। वह न तो पूरी तरह अध्यात्म को छोड़ पाया और न ही भौतिक को। वैज्ञानिक प्रगति के प्रवाह में 'मानव–विवेक' को बह जाने से रोकना मिश्र जी का परम लक्ष्य था। मानव–अस्तित्व की रक्षा के लिए उन्होंने लिखा –

'सुनाई नहीं पड़ रही है तुम्हें
फैले हुए पेड़ों की आवाज
हमें कोयला और कागज
बनाए जाने के लिए
काटा जा रहा है
और आकर्षण की जीभ से इसलिए
हमारा तुम्हारा समूचा प्राण
चाटा जा रहा है
सुनाई क्यों नहीं पड़ते
कुल्हाड़ियों से हमें
काटे जाने के खटके
खुद तुम्हें आकर्षण की जीभ से
चाटे जाने के चटके
निरर्थक कारखानों की जगह
अच्छे खासे खेतों का ख्याल
क्यों नहीं भाता तुम्हें!'

कवि मनुष्य को मानसिक गुलामी की बेड़ियों से बँधा देखकर बेचैन हो उठता है। परिणामतः वह देश को जागृत करता है। स्नेह की शक्ति से गुलामी की कड़ियाँ तोड़ना चाहता है। मिश्र जी गाँधीवाद से प्रभावित 'गाँधी दर्शन' के कवि थे। कवि को भारतीयों द्वारा किसी का अंधानुकरण पसन्द नहीं था। उसे भारतीयों द्वारा विदेशी फैशन और विचार नहीं सुहाते थे। वह विषमता के चक्र में फँसे शोषित व पीड़ित समाज को जगाना चाहता था। उसका मानना था कि जब तक समूचे विश्व में अहिंसा, शांति, स्नेह की स्थापना नहीं होती, तब तक लक्ष्य की प्राप्ति भी सम्भव नहीं। कवि गाँधी के सिद्धांतों को जन–समाज में प्रतिष्ठित कराना चाहता था। उसका मानना था कि अंधविश्वास और इससे उत्पन्न रूढ़ियों में भारतीय समाज फँसा जा रहा है और व्यक्ति को इसे छुटकारा गाँधी के सिद्धान्तों के अनुसरण से ही सम्भव है। यथा –

'हम अपनी सीमाओं में गाँधी के पथ पर
चलने का अभ्यास करेंगे

युगों–युगों के रूढ़ अंधविश्वास हमारे
शांति का शस्त्र से वास्ता नहीं है
शस्त्र शांति का कोई रास्ता नहीं है
मुझे उसके लिए दूसरों को बदलने से पहले
अपने आपको बदलना पड़ेगा।
सम्भव है हम छोड़ न पायें
सम्भव है हम सत्य अहिंसा के साधन को
अत्याचार शमन परिणति से जोड़ न पायें
सम्भव है हम विचलित होकर
अविश्वास कर बैठें हम पर।'

गाँधी जी का सिद्धान्त है कि जो व्यक्ति किसी से आचरण करवाता है वह स्वयं भी उस प्र आचरण करे इसलिए कवि चाहता था कि शांति और अहिंसा के बीज पहले अपने भीतर बोने होंगे।

अंत में कहा जा सकता है कि भवानी प्रसाद मिश्र जो देखते थे, जो महसूस करते थे, जो अनुभूत करते थे वहीं लिखते थे। अतः उनकी अनुभूति अत्यन्त सघन है जो मनुष्य को सहानुभूति के रूप में प्राप्त होती है। भवानी प्रसाद मिश्र प्रयोगवादी कवि होते हुए भी परम्परा के जीवन्त तत्वों से सम्बद्ध थे। उनका मानना था कि जब तक मनुष्य दूसरों के सुख–दुःख से सम्बद्ध नहीं होगा तब तक उसका अपना जीवन भी सुख एवं उल्लास से रहित होगा। भवानी भाई 'मानव–गरिमा' की स्थापना को आधुनिक युग के संकट–बोध में अत्यन्त आवश्यक मानते थे, साथ ही मानव व्यक्तित्व के विस्तार की बात पर भी बल देते थे। उनके जीवन और काव्य का सम्पूर्ण निचोड़ उनकी इन चार पंक्तियों में ही समाहित हो जाता है –

'चार सिक्के प्यार के फेंको
तुम्हें मस्ती मिलेगी
और मुँह पर हँसी हो
तो और भी सस्ती मिलेगी।'

संदर्भ

1. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता : समय से संवाद, सं. हरीश अरोड़ा, साहित्य संचय प्रकाशन, नई दिल्ली–2018
2. समकालीन हिन्दी कविता, वेद व्यथित, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003
3. गीत फरोश, भवानीप्रसाद मिश्र, नवहिन्द प्रकाशन, हैदराबाद, संस्करण 1056
4. अंधेरी कविताएं, भवानी प्रसाद मिश्र, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण 1968